International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 25-07-2021, Accepted: 11-08-2021, Published: 27-08-2021
Volume 7; Issue 4; 2021; Page No. 127-129

राष्ट्र भाषा हिंदी एवम सांस्कृतिक राष्ट्रवाद

डा. ज्योति बाला

संस्कृत अध्यापिका, गवर्मेन्ट स्कूल जैतपुर, रेवाड़ी, हरियाणा, भारत

सारांश

भाषा एक सशक्त एवम प्रतीक माध्यम है जिससे विभिन्न संस्कृतियों को एक साथ सम्मिलित किया जा सकता है।सभी देशों की अपनी एक प्रमुख भाषा होती है जिसे राष्ट्रीय भाषा कहा जाता है। मूलतः बहुसंख्यक वर्ग जिस भाषा का प्रयोग सबसे अधिक करता है उसे राष्ट्र भाषा का दर्जा दिया जाता है। भारत की राष्ट्रीय भाषा हिंदी है परंतु भारत देश में हिंदी एवम अन्य भारतीय भाषाओँ के बीच राजनीतिक स्तर पर सांस्कृतिक विभाजन करने के प्रयास बहुत बढ़ गए थे।

मूलशब्द: राष्ट्र भाषा हिंदी, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद

प्रस्तावना

वह भाषा जो हिंदुस्तान की शाखा है और जो देवनागरी लिपि में लिखी जा ती है पर कोई मुसलमान इसे फ़ारसी का शब्द मानता है और हिन्द के निवासी के अर्थ में बोलते हैं। हिंदुस्तान में रहने वालो को वे हिंदी कहते हैं क्योंकि हिंदी भाषी मुसलमान भी हो सकते हैं और हिन्दू भी । अमीर खुसरो ने हिंदी को इसी अर्थ में लिखा है । इस हिसाब से जितनी भाषाएँ इस देश में बोली जाती हैं सभी हिंदी कही जा सकती है। राष्ट्र भाषा के रूप में जब-जब हिंदी के विकास की चिंता की गई, वह केवल 'हिंदी 'की ही परेशानी बनकर रह गई। राष्ट्र -भाषा के विकास के मुद्दे को सही रूप में नही पहचान पाई बहुसंख्यक वर्ग की भाषा होने के कारण उसे हिंदी भाषा का दर्जा दिया गया ।

राष्ट्र-भाषा का विरोध सबसे अधिक दक्षिण भारतीय भाषाओं द्वारा किया गया जो कि बाद में हिंदी का अंग्रेजी के प्रति विरोध बन गया ।जिस हिंदुस्तानी को राष्ट्र -भाषा के रूप में गांधी या प्रेमचंद स्थापित देखना चाहते थे। वह उस सांप्रदायिक रंग से अलग हिंदी-उर्दू के उस भेद से अलग थी । उस समय यह भी माना गया कि प्रांतीय भेदभावों को दूर करने में हिंदी पूरी तरह से सक्षम है। भाषाई आंदोलनकारियों ने हिंदी में साहित्य रचा और हिंदी भाषा का प्रचार किया । प्रेमचंद ने सं 1934 में एक लेख लिखा-'बे राष्ट्रभाषा का जिसमें राष्ट्रीय विकास के लिए राष्ट्र भाषा की आवश्यकता को स्वीकार किया गया ।[1]. इतना ही नही वे देश के सांस्कृतिक विकास के लिए राष्ट्र भाषा में लिखे साहित्य के विकास को भी जरूरी मानते थे। हिंदी राष्ट्र भाषा के समक्ष दो स्तरों पर समस्याएं थी -एक हिंदी, उर्दू विवाद जो धार्मिक अलगाववाद के कारण हुआ, हिंदी का विरोध किया तथा उसे राष्ट्र और साहित्य की वास्तविक भाषा बताया गया। दूसरे ही स्तर पर जो समस्या आई वह थी प्रांतीय भाषाओं से हिंदी के संबंध की ।

अतः भारत के कुछ राज्य हिंदी भाषा को अपनाने के लिए तैयार नहीं थे। वे अंग्रेजी भाषा को

अपनाना चाहते थे । इसलिए हिंदी को भाषाई विवाद का सामना करना पड़ा और राष्ट्रीय भाषा अविकसित भाषा बन गई।संस्कृत फ़ारसी और अंग्रेजी तीनों ही जनभाषाएं नही थी ।निज भाषा में कामकाज और समाज के विकास के लिए उसकी आवश्यकता राष्ट्रीय चेतना का हिस्सा थी ।यह निज भाषा हिंदी ही थी ।

हिंदी को सुधारने और निर्मित करने के पीछे महावीर प्रसाद द्विवेदी की जो मानसिकता थी ।वह हिन्दू-उर्दू विवाद और अंग्रेजी राज्य में उसे कामकाज की भाषा बनाने से उपजी थी ।हिंदी की माँग करते हुए भी इस समय अनेक अंतर्विरोध मौजूद थे एक और हिंदी को देश भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने की आवश्यकता महसूस की गई। दूसरी ओर हिंदी के विभिन्न रूपों व उसकी जातीय पहचान को लेकर मतभेद चलते रहे महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दू धर्म की व्याख्या प्रस्तुत करते है और वेद, ब्राह्मण शास्त्रार्थ भगवद्गीता का इतिहास लिखते हुए कहते हैं कि "अंग्रेजों ने संस्कृत भाषा की ओर महत्व इसलिए दिया क्योंकि वे संस्कृत ग्रंथों को जानकर भारतीय संस्कृति को जानकर भारत पर शासन करना चाहते थे।"[2]

श्यामाचरण दुबे ने अपने लेख संस्कृति और सत्ता में शिक्षा की इसी भूमिका की ओर संकेत करते हैं," जो संस्कृति की परिसीमित व्याख्या क्षेत्र में आती है । शिक्षा को एक स्वतंत्र ओर स्वायत्तशाली क्षेत्र माना जाता है पर संस्कृति से उसका गहरा संबंध है"।[3]. लाला लाजपतराय ने भी हिंदी को राष्ट्र भाषा बनाने की बात कही है वे स्वयं वास्तव में हिंदी के अक्षर से परिचित नही थे, परन्तु हिंदी-उर्दू विवाद की राजनीति में प्रवेश करते हैं और हिंदी का समर्थन करते हैं । उनका मानना था कि भारतीय राष्ट्रवाद की नींव का आधार हिंदी भाषा ही बन सकती है । यदि हिंदी भाषा के साहित्य की बात करें तो प्रेमचंद का पूरा कथा-साहित्य उत्तर भारत के ही नही बल्कि पूरे देश की तस्वीर सामने रखता है। प्रेमचंद पहले उर्दू भाषा में लिखते थे परन्तु जैसे-जैसे राष्ट्र भाषा की आवश्यकता का उन्हें अनुभव हुआ, तब से वह हिंदी भाषा में लिखने लगे राष्ट्र की नई सांस्कृतिक पहचान बनाने और उसे पाने के लिए हिंदी साहित्यकार बैचेन था। वह अपनी भाषा को जन जन की चेतना से जोड़ने का प्रयास करना चाहता था। जो हर तरह की संकीर्णता को तोड़कर नवीन आधुनिक परिवेश का निर्माण करे ।

इनके प्रयासों से सं 1950 में संघ की भाषा के रूप में हिंदी और देवनागरी को अपनाया गया ।संघ की भाषा बनने के बाद भी हिंदी को अविकसित भाषा का दर्जा दिया गया और उसकी इस कमी को पूरी करने का काम किसी अन्य भारतीय भाषा ने नही बल्कि अंग्रेजी ने इसे अपना सुरक्षा कवच बना कर किया । जिससे वे राष्ट्र भाषा के प्रभुत्व का सामना कर सकें ।संसद में अंग्रेजी और हिंदी का प्रयोग एक दूसरे के विकल्प रूप में रखा गया केवल दक्षिण भारतीय भाषाओं के लिए यह प्रावधान रखा गया कि जो अपने भाव हिंदी व अंग्रेजी में अनुवाद करके व्यक्त कर सके । उच्चतम न्यायालय और अधिनियमों, विधेयकों आदि में प्रयोग की जाने वाली भाषा केवल अंग्रेजी ही रखी गई ।

हिंदी पर अंग्रेजी का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक हो गया। अंग्रेजी व्यापार वाणिज्य के क्षेत्र की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित होती गई और अंततः सभी शैक्षिक व बौद्धिक कार्यों की भाषा के रूप में भी उसका प्रयोग निरंतर बढ़ता चला गया और अंग्रेजी भाषा ने एक स्तरीय भाषा के रूप में प्रतिष्ठा को प्राप्त कर लिया । जिसे डा$_0$ रामबिलास शर्मा ने कहा है, " वे अंग्रेजी को एक विकसित भाषा मानने से इंकार करते हैं, यह लड़ाई सांस्कृतिक वर्चस्व की है।4साम्राज्यवादी वर्चस्व को ग्रहण करने की इतनी आदत पड गई कि आंतरिक

समस्याओं से निपटारे के लिए पुनः उसी की मदद ली जा रही है, जिसके विरुद्ध संघर्ष किया था।. भारत को आजाद करने के लिए मुख्य प्रेरणा अंग्रेजी से ही मिली लेकिन आजादी पाने के लिए भी अंग्रेजी की उतनी आवश्यकता न थी जितनी अब समाजवादी भारत के निर्माण के लिए है ।

इस प्रकार जनभाषा के आधार पर राष्ट्रीय संस्कृति का निर्माण अनेक स्तरों पर हो रहा था जातिवाद अशिक्षा अन्धविश्वास रूढ़ियाँ आदि आंतरिक समस्याओं से जूझते हुए राष्ट्रीय अस्मिता की पहचान बनाने का कार्य किया जा रहा था मुसलमानों को समझाया गया कि जिस भाषा को वे लोग उर्दू कह रहे हैं वह हिंदी से अलग नहीं है। भारतीय भाषाओँ के परस्पर झगड़े जो कि पूरी तरह से राजनीतिक है, उनका निपटारा या उनसे बचने का उपाय अंग्रेजी के द्वारा ही किया जा सकता है क्योंकि अगर हमें विकास और उन्नति के पथ पर चलना है तो विकसित साम्राज्यों की भाषा में हमें ज्ञान प्राप्त करना पड़ेगा अन्यथा अंतर्राष्ट्रीय पूंजीवाद के दौर में उपनिवेशों का भविष्य उनकी भाषाओं के द्वारा उज्ज्वल नही हो सकता ।

यदि हमने अंग्रेजी भाषा का सहारा छोड़ा तो विश्व संस्कृति से उसका संबंध भी टूट जाएगा । ऐसी सोच को अपनाने से अंग्रेजी भाषा एक वर्चस्वशाली वर्ग की भाषा के रूप में स्थापित होती गई । ये बाह्य कारण भारत ही नहीं उन सभी देशों पर लागू होते हैं जिनकी स्थिति भारत जैसे उपनिवेश सी रही है । गांधी जी कहते हैं, "हमने अपनी मातृभाषाओं के मुकाबले अंग्रेजी से ज्यादा महोब्बत रखी, जिसकी वजह से पढ़े-लिखे लोगों के साथ आम लोगों का रिश्ता बिलकुल टूट गया और हिंदुस्तान की भाषाएँ गरीब बन गई और उन्हें पूरा पोषण नही मिला ।"[5] कहने का अभिप्राय यह है कि हिंदी, मराठी और तमिल, तेलगु भाषाओं के बीच परस्पर संघर्ष बढ़ता गया।

अतः वास्तव में यदि देखा जाए तो भाषा पर विवाद करना एक राजनीति है । यदि दूसरे देशों को देखा जाये तो उनकी दो-दो-राष्ट्र भाषाएँ हैं जैसे-कनाडा, स्विट्जरलैंड । किसी भी धर्म या राजनीति को आधार बनाकर राष्ट्र भाषा को निश्चित नही किया जा सकता । भाषा देश की सांस्कृतिक एकता के लिए ही नहीं बल्कि देश की सभी समस्याओं का सामना करने के लिए भाषाओं का विकास जरूरी है। वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए विभिन्न भाषिक संस्कृतियों के अस्तित्व को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रभाषा की अस्मिता को बचाने के प्रयास किए जाने चाहिए ।इसलिए जरूरत है, सामाजिक समुदाय में सांस्कृतिक-समरूपता पाई जाए और उसके सभी सदस्यों में मानसिक स्तर पर भावनात्मक जुड़ाव हो, उनमें दृढ एकता का भाव हो और एक राष्ट्र की परिकल्पना तभी सम्भव है जब उस सांस्कृतिक समुदाय की भाषा एक हो ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. प्रेमचंद के विचार-प्रेमचंद, पृ 54
2. "महावीर प्रसाद द्विवेदी अंग्रेज अधिकारियों को पढ़ाने का फल-एक लेख पृ119
3. परम्परा इतिहास बोध और संस्कृति-श्यामाचरण दुबे पृ 11
4. डा रामबिलास शर्मा, भाषा और समाज, पृ 370
5. महात्मा गांधी -मेरे सपनों का भारत, पृ 2